समावेशी शिक्षा

अरूण कुमार वर्मा*

शिक्षा के क्षेत्र में समावेशी का अर्थ है, विशिष्ट बालकों को सामान्य बालकों के साथ जहाँ तक संभव हो, सामान्य कक्षा में ही पढ़ाना। उनको सामान्य बालकों के साथ विशेष सेवाएँ प्रदान करना, विद्यालय की गतिविधियों में शामिल करने का प्रयास करना, जिससे असमर्थ बालक को यह अहसास हो सके कि वह भी इसी विद्यालय का हिस्सा है। भारत के संदर्भ में समावेशी शिक्षा व्यापक समावेशन की माँग करती है, जहाँ समाज के सभी वर्गों, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक रूप से पिछड़े, अल्पसंख्यकों, महिलाओं, अभिवंचितों, दलितों एवं भौगोलिक, क्षेत्रीय एवं जेंडर विषमताओं की खाई को पाटते हुए विशिष्ट बालकों को सामान्य विद्यालयों की कक्षा में समावेशित कर शिक्षा के समान अवसर सुनिश्चित करने से है। इसमें विद्यालयों से अपेक्षा की जाती है कि यथासंभव शिक्षा को समावेशी बनाने का प्रयास करें। असमर्थ बालकों के सामान्य विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने से उनमें आत्मनिर्भरता का विकास होता है और उन्हें संस्कृति, समाज एवं देश की मुख्यधारा से जुड़ने का अवसर प्राप्त होता है। इस शिक्षा व्यवस्था से सामाजिक समानता के साथ-साथ हर बालक को उसकी अपनी क्षमता विकसित करने में मदद मिलेगी। समावेशी शिक्षा में सभी बच्चों का सर्वांगीण विकास ही शिक्षक की व्यवसायिक सफ़लता का मापदंड है। प्रस्तुत लेख समावेशी शिक्षा के स्वरूप, भारत में इसकी आवश्यकता और शिक्षकों के इसके प्रति उत्तरदायित्व को दर्शाने का एक प्रयास है।

शिक्षा में मनोविज्ञान का समावेश नवीनता के संदर्भ में हुआ है। विषय-केंद्रित शिक्षा का स्वरूप बालकेंद्रित हुआ, जिससे विद्यालय में हर बच्चे की निजी विशेषताओं की ओर ध्यान देना शुरू हुआ। प्रत्येक बच्चे की अपनी विशेषता है और उसी विशेषता के साथ वह सीखता है। प्रत्येक बच्चे के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर उसके अंदर छिपी योग्यता को उभारना शिक्षा का उद्देश्य है। हर बच्चे को संवैधनिक शिक्षा का अधिकार प्राप्त है। *छियालिसवें संविधान संशोधन-1976* में यह प्रावधान किया गया है कि शिक्षा बच्चे का नैसर्गिक अधिकार है, जिसे उसे मिलना चाहिए। संविधान

*शिक्षक, जवाहर नवोदय विद्यालय, सिरमौर, रीवा (म.प्र.) -486448

निर्माताओं ने शैक्षिक असमानता एवं शैक्षिक पिछड़ेपन को दूर करते हुए कानूनी व्यवस्थाओं का प्रावधान किया है। मनोवैज्ञानिक सोच और प्रजातांत्रिक पहल ने समावेशी शिक्षा के स्वरूप को प्रकाश में लाया। असमर्थ बालकों के लिए 'विशेष विद्यालयों' की स्थापना की शुरुआत अठारहवीं शताब्दी के मध्य से शुरू हुई। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने महसूस किया कि सामाजिक, आर्थिक व शिक्षा की दृष्टि से विशिष्ट बालकों को अलग करना उचित नहीं है। **क्रुकशंक (Cruikshank)** के अनुसार–'विशिष्ट बालकों की शिक्षा सम्पूर्ण शिक्षा का हिस्सा है।' उन्होंने *माना कि विशेष कक्षाओं को हतोत्साहित किया जाये।* विशेष कक्षाएँ तभी लगनी चाहिए जब कोई दूसरा रास्ता न हो। इस आंदोलन ने गति पकड़ी, 1975 ई. में अमेरिकी कांग्रेस ने प्रत्येक अक्षम बच्चे को 'शिक्षा का कानून' पारित किया जिसका उद्देश्य अक्षम बालकों को देश की मुख्यधारा से जोड़ना था। यह 'समावेशी शिक्षा' की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था।

समावेशी का सामान्य अर्थ होता है–'विकास की धारा में सबको शामिल करना।' शिक्षा के क्षेत्र में समावेशी का अर्थ विशिष्ट बालकों को सामान्य बालकों के साथ, जहाँ तक संभव हो सामान्य कक्षा में ही पढ़ाना। उनको सामान्य बालकों के साथ विशेष सेवाएँ प्रदान करना, विद्यालय की गतिविधियों जैसे म्यूज़िक, कला, भ्रमण, व्यायाम, खेल, पुस्तकालय आदि में शामिल करने का प्रयास करना, जिससे असमर्थ बालक को यह अहसास हो सके कि वह भी इसी समाज का हिस्सा है। प्रत्येक नागरिक को समान रूप से जीने और अपनी योग्यता का विकास करने की स्वतंत्रता प्राप्त है। असमर्थ बालकों को सामान्य बालकों के साथ लाने से उनमें चुनौतियों का सामना करने की क्षमता विकसित होगी साथ ही प्रजातांत्रिक मूल्यों को प्राप्त किया जा सकेगा। पहले यह माना जाता था कि असमर्थ बालकों को अलग से विशिष्ट शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। उनकी आवश्यकताएँ सामान्य बालकों से अलग हैं। दोनों को सामान्य कक्षा में शिक्षा देना संभव नहीं है।

समावेशी शिक्षा ने इस धारणा का खंडन करते हुए यह सिद्ध किया है कि सभी बच्चों की सामान्य कक्षाओं से शिक्षा की गुणवत्ता में कोई असर नहीं पड़ता और सभी बच्चे अपनी क्षमता और रुचि के अनुसार शिक्षा ग्रहण करते हैं। सिर्फ़ प्रतिभावान बालकों को ही शिक्षा देना सामाजिक न्याय नहीं है। समावेशी शिक्षा यह कहती है कि प्रतिभावन बच्चों के साथ-साथ सामान्य या जो सामान्य से कम हैं उनकी तरफ़ भी ध्यान दिया जाये, जिससे वे भी अपनी प्रतिभा का विकास कर देश की उन्नति में योगदान दे सकें।

भारत के संदर्भ में समावेशी शिक्षा व्यापक समावेशन की माँग करती है, जहाँ समाज के सभी वर्गों तथा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक रूप से पिछड़े, अल्पसंख्यकों, महिलाओं, अभिवंचितों, दलितों एवं भौगोलिक, क्षेत्रीय एवं जेंडर विषमताओं की खाई को पाटते हुए विशिष्ट बालकों को समेकित शिक्षा प्रणाली द्वारा सामान्य विद्यालयों की कक्षा में समावेशित कर शिक्षा के समान अवसर सुनिश्चित करने से है। इसमें विद्यालयों से अपेक्षा की जाती है कि यथासंभव शिक्षा को समावेशी बनाने का प्रयास करें।

समावेशन की नीति

समावेशन की नीति को हर स्कूल और सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की ज़रूरत है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में वह चाहे स्कूल में हो या बाहर, सभी बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की ज़रूरत है। स्कूलों को ऐसे केंद्र बनाए जाने की आवश्यकता है जहाँ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चों, खासकर शारीरिक या मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों, समाज के हाशिए पर जीने वाले बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चों को शिक्षा के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के सबसे ज़्यादा फ़ायदे मिलें। अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने के मौके और सहपाठियों के साथ बांटने के मौके देना बच्चों में प्रोत्साहन और जुड़ाव को पोषण देने के शक्तिशाली तरीके हैं।

स्कूलों में अक्सर हम कुछ गिने-चुने बच्चों को ही बार-बार चुनते रहते हैं। इस छोटे समूह को तो ऐसे अवसरों से फ़ायदा होता है, उनका आत्मविश्वास बढ़ता है और वे स्कूल में लोकप्रिय हो जाते हैं। लेकिन दूसरे बच्चे बार-बार उपेक्षित महसूस करते हैं और स्कूल में पहचाने जाने और स्वीकृति की इच्छा उनके मन में लगातार बनी रहती है। तारीफ़ करने के लिए हम श्रेष्ठता और योग्यता को आधार बना सकते हैं लेकिन अवसर तो सभी बच्चों को मिलने चाहिए और सभी बच्चों की विशिष्ट क्षमताओं को भी पहचाना जाना चाहिए और उनकी तारीफ़ होनी चाहिए।

इसमें विशेष ज़रूरतों वाले बच्चे भी शामिल हैं, जिन्हें दिए गए काम को पूरा करने में ज़्यादा समय या मदद की ज़रूरत होती है। ज़्यादा अच्छा होगा अगर शिक्षक ऐसी गतिविधियों की योजना बनाते समय कक्षा में बच्चों से चर्चा करें और यह सुनिश्चत कर लें कि प्रत्येक बच्चा अपना योगदान दे पाए। इसीलिए योजना बनाते समय, शिक्षकों को सभी की भागीदारी पर विशेष ध्यान दिए जाने की ज़रूरत है। यह उनके **प्रभावी शिक्षक** होने का सूचक बनेगा (एनसीईआरटी, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005, पृ. 96)

समावेशी के संदर्भ में विशिष्ट बालक को समझना आवश्यक है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली यह मानती है कि प्रत्येक बालक की अपनी निजी विशेषता है और हर बालक एक दूसरे से भिन्न है। ऐसे में विद्यालय की ज़िम्मेदारी बढ़ जाती है कि वह शिक्षा में सभी बच्चे को शामिल करते हुए शिक्षा को प्रत्येक बच्चे के स्तर का बनाए। विशिष्ट बालक को परिभाषित करते हुए क्रुकशंक (Cruikshank) लिखते हैं "एक विशिष्ट बालक वह है जो शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक रूप से सामान्य बुद्धि एवं विकास से इतना विचलित होता है कि नियमित कक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित नहीं हो सकता तथा जिसे विद्यालय में विशिष्ट देखरेख की ज़रूरत होती है।"[1]

समावेशी शिक्षा में बालकों की प्रवृत्ति या निजी विशेषताओं को जानना आवश्यक है जिससे सभी को समायोजित करने में आसानी होगी। विशिष्ट बालक जिनकी विशेषताएँ सामान्य से अलग हैं उनमें प्रतिभा संपन्न बालक, सृजनात्मक बालक, पिछड़े बालक, समस्यात्मक बालक, कुसमायोजित बालक, अपवंचित बालक, विकलांग बालक, मादक द्रव्य व्यसनी बालक आदि। समावेशी शिक्षा का मुख्य फ़ोकस असमर्थ और अपवंचित बालकों

पर है परंतु सब को समायोजित कर उनकी ज़रूरत के अनुसार शिक्षा देना विद्यालय का उत्तरदायित्व है।

शिक्षा को समावेशी क्यों बनाया जाए इसको लेकर प्रारंभ में शिक्षाविदों में मतभेद था परंतु बालकेंद्रित शिक्षा ने बालकों को स्वतंत्रता प्रदान की और यह सिद्ध किया कि शिक्षा में बालक महत्वपूर्ण है। हम प्रत्येक बच्चे को ध्यान में रखकर शिक्षा के कार्यक्रम बनाकर ही सार्थकता को प्राप्त कर सकते हैं। विशिष्ट स्कूलों में असमर्थ बच्चा पढ़ तो लेता है परंतु उसकी बहुमुखी प्रतिभा का विकास नहीं हो पाता है। असमर्थ बालक अपने आप को समाज से कटा महसूस करने लगता है और उसमें हीन भावना विकसित होने लगती है। असमर्थ बालकों के सामान्य विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने से उनमें आत्मनिर्भरता का विकास होता है और उन्हें संस्कृति, समाज एवं देश की मुख्यधारा से जुड़ने का अवसर प्राप्त होता है।

सामान्य और असमर्थ बालक दोनों एक दूसरे के नज़दीक आते हैं जिससे असमर्थ बालक में जीवन के प्रति चुनौती और सामान्य बालकों में उसके प्रति सहानुभूति का भाव विकसित होता है। समानता की दृष्टि से भी भारतीय संविधान प्रत्येक बालक को बिना किसी भेदभाव के समान शिक्षा के प्रति प्रतिबद्ध है। समानता की दृष्टि से भी समावेशी शिक्षा महत्वपूर्ण है। सामान्य विद्यालय सभी बच्चों को एक साथ प्राकृतिक और शैक्षिक वातावरण मुहैया कराता है, जिससे सभी बच्चों को आदर्श 'ग्रुप लर्निंग' का अवसर उपलब्ध होता है। एक बालक शिक्षक की अपेक्षा ग्रुप में ज़्यादा सीखता है। सामान्य विद्यालय का ग्रुप असमर्थ बच्चों के विशिष्ट विद्यालय की अपेक्षा ज़्यादा व्यापक होता है जिससे उनका मानसिक विकास विशिष्ट स्कूलों से अधिक हो सकता है। सामान्य विद्यालय सभी का प्रतिनिधित्व करता है, जिससे असमर्थ बालकों में सामाजीकरण की भावना का विकास विशिष्ट विद्यालय की अपेक्षा ज़्यादा होता है और उनमें सामाजिक मूल्यों जैसे – प्यार, दयालुता, समायोजन, सहायता, भाईचारा आदि का विकास होता है। भारत जैसे विकासशील देश में आर्थिक दृष्टि से भी सामान्य विद्यालय कम खर्चे में सभी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने में सफ़ल हो रहे हैं। सभी बच्चों को समान और प्रेरणादायी वातावरण उपलब्ध कराने में भी समावेशी शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। उदाहरण स्वरूप कोई भी बड़ा पद बड़ी प्रतियोगिता की माँग करता है और दूर की कौड़ी लगता है, लेकिन जब कोई अपने बीच का उस पद पर चयनित होता है तब यह पद हमारी प्रतियोगिता के दायरे में आ जाता है। इसलिए जब सभी बच्चे एक वातावरण में रहते हैं तब असमर्थ बच्चे में भी हीनभावना के स्थान पर प्रतियोगी विचार जन्म लेते हैं।

भारत के संदर्भ में समावेशी शिक्षा की आवश्यकता सिद्ध हो जाने के उपरांत कैसे इसे सफ़ल बनाया जाये यह महत्वपूर्ण प्रश्न है। इस दिशा में *राष्ट्रीय शिक्षा नीति, सरकारी योजनाएँ और शैक्षिक प्रयास* सार्थक भूमिका निभा रहे हैं। **कोठारी आयोग** ने समान विद्यालय की अवधारणा पर अपनी राय जारी की थी। **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986** में अपंग बच्चों की शिक्षा का प्रावधान किया गया है। 'इसमें सब के लिए शिक्षा के राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हमारे भौतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए बुनियादी मुद्दा माना

गया है।' *जनार्दन समिति 1992* की सिफ़ाशिों का सारांश इस प्रकार है "सहभागी शिक्षा आदेश की अवधारणा शैक्षिक संस्थाओं को शामिल करने तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिए बल्कि समूचे समाज को इसमें शामिल किया जाना चाहिए।"[2] **दिसंबर 1993** में 'सभी के लिए शिक्षा' का घोषण पत्र आया। समावेशी शिक्षा को प्रभावी बनाने के संदर्भ में **'सर्वशिक्षा अभियान' 2002** अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसका उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा को जन-जन तक पहुँचाने के संवैधानिक लक्ष्य को प्राप्त करना है। 'निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम' 2009 – समावेशी प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता पर बल देता है "प्रस्तावित विधान को इस विश्वास के आधार पर तैयार किया गया है कि समता, सामाजिक न्याय, और लोकतांत्रिक मूल्य तथा एक न्याय संगत और मानवीय समाज का सृजन केवल सभी व्यक्तियों के लिए समावेशी प्राथमिक शिक्षा के उपबंध के माध्यम से ही संभव है।"[3]

समावेशी शिक्षा के संवैधानिक एवं सरकारी संरक्षण एवं प्रयास के साथ-साथ विद्यालय और शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है। शिक्षा को कार्य रूप देने का स्थान विद्यालय और प्रमुख कर्ता शिक्षक होता है। समान विद्यालय की अवधारणा में शिक्षक का संवेदनशील होना अति आवश्यक है। वर्तमान शिक्षा पद्धति बच्चों को लेकर उदार है। अनुत्तीर्ण होने का भय समाप्त कर दिया गया है। बच्चा किसी भी तरह की प्रताड़ना से सुरक्षित है। पाठ्यक्रम एवं मूल्यांकन पद्धति उदार हुई है। ऐसे में बच्चों के साथ खासकर असमर्थ बालकों के साथ विद्यालय और शिक्षक को संवेदनशील होने की आवश्यकता है। आज शिक्षक को विषय ज्ञान के साथ-साथ बालमनोविज्ञान को जानना आवश्यक है। कक्षा शिक्षण में समस्त बच्चों की सहभागिता को ध्यान में रखना शिक्षक की प्रमुख ज़िम्मेदारी है। कक्षा में सभी बच्चों की सहभागिता के लिए उनके मानसिक, सामाजिक स्तर और रुचि को जानना आवश्यक है। विशिष्ट बच्चों की पहचान और उनकी अलग-अलग समस्याओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षण को यथासंभव समस्त कक्षा के लिए बनाना आवश्यक है। समान विद्यालय में 'ग्रुप लर्निंग' विधि सबसे कारगर है। सभी छात्र ग्रुप में अपनी सहभागिता आसानी से दे लेते हैं। जो बात वह सार्वजनिक रूप से नहीं कर पाता है वह ग्रुप में कर लेता है, परंतु ग्रुप बनाते समय शिक्षक को ध्यान देना चाहिए कि वह समावेशी हो। समावेशन के संदर्भ में *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* में उल्लेख किया गया है ''ज़्यादा अच्छा होगा अगर शिक्षक ऐसी गतिविधियों की योजना बनाते समय कक्षा के बच्चों से चर्चा करें और यह सुनिश्चित कर लें कि प्रत्येक बच्चा अपना योगदान दे पाए। इसलिए योजना बनाते समय शिक्षकों को सभी की भागीदारी पर विशेष ध्यान देना ज़रूरी है। यह उनके प्रभावी शिक्षक बनने का सूचक बनेगा।''[4]

समावेशी शिक्षा के लिए शिक्षक को लोकतांत्रिक मूल्यों में विश्वास करना चाहिए। व्यक्तिगत जीवन में वह कैसा भी हो परंतु विद्यालय के संदर्भ में उसे लोकतांत्रिक मूल्यों को अपनाते हुए सभी बच्चों के साथ समान व्यवहार करना चाहिए। समानता ही समावेशी शिक्षा की पहली सीढ़ी है और लोकतंत्र की भी। हमारे मन में यह धारणा घर कर गई है कि बच्चों की प्रकृति की विविधता से अधिगम

Ch_1 to 3.indd 28 6/17/2015 10:46:04 AM

की गुणवत्ता प्रभावित होती है। विशिष्ट बच्चों को विशेष कक्षा की आवश्यकता पड़ती है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* में इसका समाधान किया गया है "स्कूल प्रशासकों एवं शिक्षकों को यह समझना चाहिए कि जब भिन्न सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और भिन्न क्षमता स्तर वाले लड़के-लड़कियाँ एक साथ पढ़ते हैं तो कक्षा का वातावरण और भी समृद्ध तथा प्रेरक हो जाता है।"[5]

समावेशी कक्षा शिक्षण में शिक्षक का रवैया महत्वपूर्ण होता है। शिक्षक को विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति सकारात्मक रवैया रखते हुए संपूर्ण कक्षा शिक्षण को बढ़ावा देना चाहिए। सामान्य तौर पर शिक्षण प्रतिभावान बालकों तक सीमित रह जाता है परंतु समान कक्षा में शिक्षक को प्रत्येक छात्र के हितों को ध्यान में रखना आवश्यक है। शिक्षक को सभी बच्चों से समान उत्तर की अपेक्षा न करते हुए उसकी क्षमता को ध्यान में रखते हुए इंतज़ार करना चाहिए या उसे अधिक समय देना चाहिए। नयी तकनीक, शिक्षण के क्षेत्र में नये आयाम सृजित कर रही है जो समावेशी शिक्षा के क्षेत्र में काफ़ी कारगर सिद्ध होंगे। शिक्षक को नयी तकनीकी से जुड़कर नवाचार को बढ़ावा देना चाहिए। आज ऐसे बहुत-से सॉफ्टवेयर बन गए हैं जिनका उपयोग करके दृष्टि बाधित व मूक-बधिर बालकों को कक्षा में सहभागिता के अधिक अवसर दिये जा सकते हैं। शिक्षक को इन सॉफ्टवेयरों की जानकारी व उपयोग करना आना चाहिए। *शिक्षक सिर्फ़ शिक्षक या निर्देशक न होकर बच्चों का मित्र, सहायक और मार्गदर्शक भी है।* उसे बच्चों के साथ सौहार्द और सहानुभूति रखते हुए न्याय संगत होना चाहिए। समावेशी शिक्षा में एक संवेदनशील शिक्षक ही सभी बच्चों के साथ न्याय कर पाएगा।

निष्कर्षत: समावेशी शिक्षा सामाजिक समानता के साथ-साथ हर बालक को उसकी अपनी क्षमता विकसित करने में मदद करती है। इससे असमर्थ बालक अपने को जीवन की चुनौतियों का सामना कर सकने के योग्य बनता है। वह अपने को समाज और देश का हिस्सा स्वीकार करते हुए उसके विकास में योग देता है। समावेशी शिक्षा में शिक्षक की ज़िम्मेदारियाँ एवं उत्तरदायित्व और बढ़ जाता है। सभी बच्चों का सर्वांगीण विकास ही उसकी व्यवसायिक सफलता का मापदंड है। निश्चित ही शिक्षक खुद प्रकाशित होकर समावेशी शिक्षा की सफ़लता में अपना योगदान देता रहेगा।

संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

[1] बाजपेयी एल.बी. 200. *विशिष्ट बालक.* भारत बुक सेंटर, लखनऊ. पृ. 3.

[2] अग्रवाल जे.सी. 2006. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति.* प्रभात प्रकाशन, दिल्ली. पृ. 7.

[3] भारत सरकार. 2009. *निशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम – 2009.*

[4] एन.सी.ई.आर.टी. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005.* नयी दिल्ली. पृ. 96.

[5] ______. नयी दिल्ली. पृ. 98